दंड की प्रकृति और उद्देश्य

आपराधिक न्यायव्यवस्था की एक महत्वपूर्ण उपज दंड की संकल्पना है. क्या दंड की संकल्पना न्यायसंगतहै? कुछ का तर्क है कि कानून को तोड़नेवाले एक प्रकार की बीमारी के शिकार रहते हैं इसलिए उनको दण्डित करने की बजाये उनको उपचार देने की आवश्यकता है. जबकि दूसरे तर्क देते हैं कि व्यक्ति जो कानून तोड़ता है वह अन्यायपूर्ण सामाजिक व्यवस्था का शिकार है, इसलिए वे उसके लिए उतरदायी नहीं हैं. फलत: उनको दण्डित नहीं किया जाना चाहिए. इस दृष्टिकोण से जनता के संशाधनों का उपयोग आपराधिक न्याय-प्रणाली को बनाये रखने की बजाए सामाजिक अन्याय को खत्म करने में लगाना चाहिए.

यदि कानून को तोड़ने वालों को दण्डित करने संबंधी संकल्पना को स्वीकार कर लिया जाता है तो प्रश्न उठता है कि क्या मानवीय तरीके से दंडित किया जाना संभव है? अमेरिकन ( भारत की क्या दृष्टि है?)कानून दंड के क्रूर और असामान्य उपयोग का निषेध करता है. हमारी आपराधिक व्यवस्था दंड के रूप में जुर्माना,परिवीक्षा,कारावास, जाँच,निगरानी और अपराध के रूप में कभी-कभी मृत्युदंड भी दिया जाता है. मुख्य रूप से कारावास दंड का एक ऐसा सामान्य स्वीकृत रूप है कि हम भूल जाते हैं कि इसका तुलनात्मक रूप से इतना व्यापक उपयोग एक नया विकास है. 19 वीं सदी के सुधारवादियों ने दंड के रूप में जबरन श्रम,शारीरिक दंड या मृत्यु जो उस समय के समाजों में सामान्य था, की बजाए एक मानवीय विकल्प के रूप में कारावास की वकालत की थी. सुधारवादी आन्दोलन का आपराधिक न्याय-प्रणाली पर गहरा प्रभाव है. इस बात पर जोर है कि कैदियों को दंड देने के साथ-साथ उनके पुनर्वास की भी व्यवस्था की जाए ताकि वे दीर्घकाल में समाज और अपराधियों केलिए लाभप्रद हो.

 हम सभी जानते हैं कि विधमान कारावासों की क्रूर दशाएं हैं. इसलिए, कुछ आलोचकों का तर्क है कि कारावास दंड देने का मानवीय रूप नहीं कहा जा सकता है. इसके अतिरिक्त, कम बजट और कैदियों की बढ़ती संख्या के कारण पुनर्वास के उद्देश्य को पूरा करने के दावे केवल कहने भर तक सीमित रह जाते हैं. इस स्थिति में, कारावास जो कैदी के जीवन को कष्ट और अतिसंकुलता में डाल देता है, दंड के एक प्रकार के रूप में क्या न्याय-संगत ठहराया जा सकता है? क्या कोई अन्य व्यवहारिक रूप है जिस पर सोचा जाना चाहिए? इस सम्बन्ध में एक सुझाव यह आता है कि दण्डित अपराधियों को वर्क-रिलीज़ प्रोग्राम- सामुदायिक सेवा करवाना और उनके शिकार लोगों की बहाली के कार्यों में लगाना चाहिए. न्यूयार्क राज्य द्वारा अपराधियों की सजा केलिए एक नया प्रयोग किया गया. जिसमें अपराधियों को एक छोटा ट्रांसमिटर पहनाया गया जो घर पर रहते हैं और काम पर जाने केलिए स्वीकृति रखते हैं. कंप्यूटर के माध्यम से उन ट्रांसमीटरों का निरीक्षण किया गया जो कि दोषियों द्वारा किसी भी प्रकार की अनाधिकृत गतिविधि करने पर चेतावनी देता है. इस योजना का लक्ष्य कारावास में कैदियों की अतिभीड़ को कम करना और उनकी देखरेख पर होनेवाले खर्चे को घटाना था. इसके साथ ही कैदियों को कैदी की जीवन दशाओं से निरुद्देश्यपूर्ण होनेवाली पीड़ाओं को रोकना है.

 दंड के विभिन्न प्रकारों में श्रेष्ठ कौनसा?, के सम्बन्ध में लोगों के की विचारदृष्टि उसके प्रयोजन से प्रभावित रहती है. उपयोगितावादी विश्लेषण अपराधियों को दण्डित करने संबंधी *‘निवारक’* सिद्धांत पर जोर देते हैं. कुछ उपयोगितावादी तर्क देते हैं कि कारावास दंड का सस्ता (कीमत-प्रभाव) रूप नहीं है क्योंकि इनको बनाये रखने केलिए समाज के खर्च होनेवाले संसाधनों की तुलना में निवारक प्रभाव अपर्याप्त हैं. आंकडें बताते हैं कि कैदियों के बीच व्याप्त अपराध-व्यसन की प्रबल प्रवृति कभी-कभी इस तर्क को मजबूत बनाती है. इसी तर्क से उपयोगितावादी, कारावास की बजाये जुर्माना ( संभवतः शारीरिक दंड) की व्यवस्था के पक्ष सम्बन्ध हैं. चूँकि उपयोगितावादी दृष्टिकोण में ‘सारे दंड आवश्यक बुराई हैं” इसलिए, दंड के किसी विशेष रूप का तुलनात्मक दृष्टि से ज्यादा मानवतापरक होना सर्वोच्च मापदंड नहीं है.

 निरपेक्षतावादी दंड के सम्बन्ध में प्रतिशोधात्मक सिद्धांत पर बल देते हैं. उनका तर्क है कि दंड के सम्बन्ध में निवारक सिद्धांत कांट के नीतिशास्त्र के लक्ष्य को पूरा नहीं कतरा है जो कहता है कि ‘किसी व्यक्ति को कभी भी किसी अन्य साध्य का महज साधन के रूप में इस्तेमाल नहीं किया जा सकता. फिर इसका कोई महत्व नहीं है कि वह लक्ष्य कितना वांछनीय है.’ फलनिरपेक्षवादियों केलिए दंड की कठोरता अपराध के शिकार व्यक्ति की हानि के अनुपात में होनी चाहिए. इस दृष्टि से यदि कोई यह निर्धारित करता है कि किसी ने जो अपराध किया है उसके लिए कारावास ज्यादा गंभीर दंड है तो यह देखा जाना चाहिए कि विशेष प्रकार के अपराध में उसकी हानि के अनुपात में दंड मिले.

 नीचे के लेख में ह्यूगो आदम बदौ इस संबंध में दंड की प्रकृति और उसके औचित्य संबंधी सिद्धांतों का परीक्षण करते हैं. लेखक इस बात पर बल देते हैं कि जहाँ एक तरफ यह संभव और वांछनीय है कि दंड में इरादतन रूप से अधिकारों से वंचित रखना और गैर-इरादतन किन्तु असली नुकसान जिसको बहुत सारे कैदी झेलते हैं, के बीच अंतर किया जाये. बदौ तर्क करते हैं कि दंड की प्रकृति और उद्देश्यों को स्पष्ट रूप से परिभाषित करने से न्यायिक प्रणाली के बहुत सारे पक्षों का मुल्यांकन कर सकते हैं और उन अपराधियों को दण्डित करने के सम्बन्ध में सिद्धांत और व्यवहार के बीच पायी जाने वाली *रिक्तता* को कम कर पाएंगे.

ह्यूगो आदम बदौ----***“दंड के बिना दुनिया”***

हमारे समाज में विधमान आपराधिक न्याय तंत्र और दंड के प्रचलित प्रकार कई आपतियों के विषय बने रहते हैं. मसलन ---

1. बहुत सारे कार्य (जुआखोरी) और दशाएं ( सार्वजनिक अश्लीलता और नशा) दंडनीय अपराध हैं जिसके कारण हम अतिअपराधीकरण के मामलों के शिकार हो गये हैं.
2. कुछ व्यक्ति हैं जो नुकसानदायक और हानिकारक कार्यों में दोषी पाये जाते हैं. उनमें से भी कुछ पर दोष साबित होता है और उनमे से भी कुछ को दण्डित किया जाता है.
3. बहुत सरे व्यक्ति कैदखानों में अपने आपराधिक कार्यों की बजाये उनके सामाजिक दर्जे व वर्ग के कारण डाल दिया जाता है. उदहारण केलिए गरीब,कमजोर या दलित/काले
4. बहुत से लोग अपने अपराध से अधिक कठोर दंड की सजा पाते हैं. उदाहरण केलिए, चरस-गांजा के दोषी को लम्बे कारावास में डाल देना और अनिश्चयात्मक सजा दी जाती है.
5. बहुत सारे व्यक्ति कारावास के दंड पाते हैं जबकि उनके अपराध केलिए अपराधिक न्यायिक व्यवस्था के दूसरे विकल्प भी हो सकते हैं
6. साधारण अपराध केलिए असाधारण दंड दिया जाता है. बहुत सारे दंड संवैधानिक रूप से थोंप दिए जाते हैं जो सामान्य निवारक के अस्पष्ट आधारों पर आधारित होते हैं इनमें

यह दिखाने केलिए साक्ष्यों का अभाव रहता है कि इस तरह की धमकी संभावित अपराधियों केलिए उनके आचरण को प्रभावित करती है.

1. बहुत से लोग ऐसे नुकसान और कठिनाइयों को झेलते हैं जो उनके दंड का हिस्सा नहीं है. किनती रिहाई और जेल की व्यवस्था संबंधी प्रशासनिक स्थितियों पर उनकी निर्भरता के कारण वे बच नहीं सकते हैं. उदाहरण केलिए, जाँच करने से पूर्व रोकने संबंधी सुविधाओं की अल्पता, कैद में निगरानी स्टाफ के द्वारा दुरुपयोग और अपने दूसरे सहवासी अपराधियों का शिकार होना.
2. बहुत सारे लोग क़ानूनी अराजकता के शिकार रहते हैं. उदाहरण केलिए, न्यायिक घुसखोरी और पुलिस की क्रूरता.
3. दंड की विधमान व्यवस्था भुत सारे लोगों को बदतर स्थिति में धकेलती है.

 इस तरह की शिकायतें पूरी व्यवस्था में आमूलचूल बदलाव की मांग करती हैं. ===========

इन शिकायतों ने *“दंड के बिना एक दुनिया”* की दृष्टि को प्रेरित किया है. अराजकतावादियों और समाजवादियों द्वारा लंबे समय से प्रशंसा की गई एक यूटोपिया, जिसमें न केवल कोड़ा और फांसी जैसे प्रावधान गायब हो जाते हैं बल्कि बेड़ियाँ और सलाखें , और वे सभी उत्पीड़नकारी उपकरण जिसमें राज्य ‘*कानून और व्यवस्था’* के नाम पर अपने ही नागरिकों के साथ जोर-जबरदस्ती करते हैं, को भी हटा देने की मांग है.दंड के सम्बन्ध में इस तरह की आंशिक आपतियां गैर-दंडात्मक व गैर-दमनकारी समाज और सही अर्थों में सामुदायिक जीवन की परिकल्पना का हिस्सा है. यह सोच रूचिकर है मगर कठिन सवाल उठाती है. मसलन- क्या हम पूर्ण अव्यवस्था की कीमत चुकाए बिना हमारी सभी दंडात्मक संस्थाओं को खत्म कर सकते हैं? यदि हम दंडात्मक तन्त्र को खत्म कर देते हैं, समाज जैसा है उसको वैसा ही छोड़ देते हैं, न हम हमारे व्यक्तित्व व चरित्र और सोच को बदलते हैं, न विधमान सामाजिक और आर्थिक नीतियों में बुनियादी बदलाव कर रहे हैं और न ही प्राकृतिक संसाधनों की गंभीर समस्याओं के बारे में कोई जबाबदेही सुनिश्चित कर रहे हैं, तो इस तरह की दंड-विरोधी प्रवृतियों का व्यवहार में क्या परिणाम निकलेगा? क्या यह आश्रम और पवित्र जीवन का पर्याय नहीं बन जायेगा? ये सवाल परस्पर विरोधी हित-सम्बन्धों आधारित सामाजिक व्यवस्था के संकट हैं या महज नैतिक शिक्षा के सवाल हैं?

 यदि विधमान व्यवस्था के खिलाफ ये विशेष प्रकार की शिकायतें पूरी तरह से सही हैं तो हमारे दंड के सिद्धांतों और दंडात्मक व्यवहार में क्या रूपांतरण किया जाये ताकि हम जो विधमान प्रचलित व्यवस्था है उससे बेहतर व्यवस्था प्राप्त कर सके.

 एक दृष्टि से इन प्रश्नों का उतर इस प्रकार दिया जा सकता है—

पहला, दंड निश्चित रूप से कुछ आवश्यक विशेषता रखता है. उदाहरण केलिए, अधिकारों से वंचित करना या पीड़ा देना जो कि किसी भी व्यक्ति केलिए निंदनीय है और जो अपने आप में दुरुपयोग को बढ़ावा देती है.

दूसरा, दंड की प्रकृति और औचित्य संबंधी विधमान सिद्धांतों का निष्पक्ष विश्लेषण यह दिखाता है कि दंड की वर्तमान प्रणाली अबोधगम्य और अरक्षणीय है. इस सिद्धांत के पड़नेवाले प्रभावों की अभी तक ठीक से विश्लेषण-जाँच नहीं की गई है.

तीसरा, अंग-भंग करने और मृत्यु देने के दंडों,जिनका प्रभाव प्रत्यक्ष रूप से साफ दिखाई देता है, के अलावा व्यक्ति के अपराध केलिए दिए गए दंड के उसके जीवन और व्यक्तित्व पर पड़नेवाले सम्पूर्ण प्रभावों के बारे में भविष्यवाणी करने में असमर्थ है. इस तरह की स्थितियां हमें दंड के कुछ प्रकारों को लागू करने में पूरी तरह से सावधान करती हैं. उदाहरण केलिए, एक ऐसे व्यक्ति को दीर्घकाल तक रोकना, जो समाज में बाद में एक साधारण व्यक्ति के रूप में जीवन जीने का स्थान चाहता है.

चौथा, विधमान व्यवस्था के घातक नुकसानों को कम करने केलिए यथासंभव, दंड के बुनियादी विकल्पों के साथ तत्काल न्यायोचित प्रयोग करने चाहिए. यदि दंड की प्रचलित व्यवस्था को खत्म करने की मांग प्रबल व वांछनीय है तो किसी को यह अपेक्षा नहीं करनी चाहिए कि यह बिना किसी बड़ी कीमत चुकाए और नयी पहलकदमियों के हो सकती है जो कि उत्तर-औधोगिक समाजों के आवश्यक चरित्र के साथ अंतर्विरोधी हो सकता है.

पांचवा, वर्तमान समय में हमारे पास कोई सामान्य विकल्प उपलब्ध नहीं है जो जनता के द्वारा स्वीकृत है और जो दंड से जुड़े तमाम नुकसानों और दुरुपयोगों से रहित हो और आपराधिक हिंसा की मूल समस्या का प्रभावकारी जबाब हो. अंततः एक ओर दंड के विधमान तंत्र के खिलाफ की जाने वाली शिकायतें अहम और वैधानिक हैं वहीं पर “दण्ड के बिना एक दुनिया” अलभ्य और अवांछनीय है. यद्धपि यदि हम दंड की प्रकृति और उसके औचित्य संबंधी दार्शनिक विचारों का परीक्षण करें तो देख सकते हैं कि कम से कम कैसे पहले तीन दावे सही हैं जो कुछ दूसरे दावों के स्पष्टीकरण में भी सहायता करते हैं.

 2

 पिछले कुछ दशकों से दंड की प्रकृति संबंधी पश्चिमी जगत के दार्शनिक एक आम सहमति पर पहुंचे हैं. इस धारणा की जड़े हाब्स के “लेविथन” में दिखाई देती हैं. किन्तु अभी तक दंड की सही और औपचारिक परिभाषा देने संबंधी कार्य को गंभीरता से नहीं लिया गया है. यह कार्य बाह्यतौर पर काफी सरल लगता है. लेकिन ऐसा है नहीं. किसी भी अवधारणा की परिभाषा उसको निश्चित सीमाओं में बांधती है. इसके अलावा भी, बहुत सारी ऐसी स्थितियां हैं जो दंड जैसी या उसकी सहवर्ती हैं, इसलिए इनसे अलग करना कठिन रहता है. उदाहरण केलिए, किसी व्यक्ति को दण्डित करने संबंधी विचार को समझने केलिए यह जरुरी है कि इससे जुड़े सम्बन्धित किन्तु भिन्न अवधारणाए जो व्यक्ति के आचरण को नियंत्रित करने संबंधी हैं- बदला लेना, इरादतन नुकसान पहुँचाना, गैर-इरादतन नुकसान पहुँचाना,निन्दात्मक और दोषपूर्ण आचरण करना इत्यादि, से अलग किया जाये. इसी तरह एक व्यक्ति जिसने कर चोरी की है,उसे दंडित करना और यह कहना कि यदि ईश्वर है तो उसे दंडित करें या व्यक्ति अपने आपको दंडित करता है या कोई निर्दोष दंडित किया जाता है. ये तमाम तरह के भेद करना और फिर इन प्रश्नों का उतर देना दंड की प्रकृति संबंधी सहमति विकसित की जा सकती है. यह निम्नलिखित कथन में अभिव्यक्त की जा सकती है-

मान लीजिए कि P नाम का एक व्यक्ति है जिसको X प्रकार का दंड दिया जाता है. यदि और केवल यदि-

1. X एक पीड़ा है या असुखद स्थितियों से जनित दर्द है.
2. X, P पर किसी दूसरे व्यक्ति (Q) द्वारा इरादतन थोपा गया है.
3. Q P पर X थोपने के लिए व्यवस्था के नियमों के तहत अधिकार रखता है.
4. Q द्वारा P पर X का थोपा जाना क़ानूनी रूप से परिभाषित अपराध की व्याख्या है.
5. क्योंकि P अधिकारिकतौर पर अपराधी पाया गया है.

. हमारे उद्देश्यों केलिए, ऊपर दी गई परिभाषाओं में वैधानिक कानूनों पर जोर स्वीकार्य है क्योंकि विधमान विवेचन में, दंड का विचार और उसको व्यवहार रूप देनेवाली संस्थाएं वे हैं जो कि दंड की वैधानिक व्यवस्था में हैं. दंड, निश्चित रूप से, कानून के तहत सरकार के कृत्यों तक ही सीमित नहीं है. फिर भी ये ऐसी सजाएं हैं जो सबसे गम्भीर सामाजिक समस्या को जन्म देती हैं और जब कोई भी गंभीरता से *"दंड के बिना एक दुनिया”* के विचार पर सोचता है, तो यह प्राथमिक मुद्दे के रूप में उभरता है.